शारदा भित्ति पत्रिका

त्रैमासिक शारदा भित्ति पत्रिका
वर्ष 2025, अंक-10
{अप्रैल-जून}

संरक्षक

प्रो. संजीव जैन
माननीय कुलपति
जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय

परामर्शदाता

प्रो. भारत भूषण
विभागाध्यक्ष
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

प्रधान संपादक

डॉ. शशिकांत मिश्र
(सह - आचार्य)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

संपादक

अंशु कुमारी (शोधार्थी)
विष्णु (शोधार्थी)

विश्वविद्यालय वेबसाइट:
https://www.cujammu.ac.in
विभागीय मेलः
office.hnd@cujammu.ac.in

पत्रिका में प्रस्तुत रचनाओं एवं आगामी अंक हेतु सुझाव के लिए संपर्क सूत्र
दूरभाष -9030963026
डॉ. शशिकांत मिश्र

संपादकीय

मन मुग्धकारी प्रकृति की आभा सचमुच शब्दातीत है। उमड़ते-घुमड़ते बादलों के साथ धरा पर वर्षा ऋतु के आगमन तथा प्रकृति का रजस्वला बनना ईश्वर का पृथ्वी लोक के ऊपर एक बड़ा आशीर्वाद है। भीषण गर्मी से त्राहिमाम्-त्राहिमाम् करने वाली धरती अपनी प्यास बुझाते हुए स्वयं को सफेद जलराशियों से सजाकर ऐसा आभा मंडित कर लेती है कि मानो धरा पर शुक्लवर्णा माँ शारदे का आगमन हो गया हो...

भू पर वर्षारानी के अवतरण के साथ उसके स्वागत में मोर का पंख फैला-फैला कर भाव-विभोर नृत्य, चारों ओर पक्षियों के कलरव से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे देवराज इंद्र के आह्वान पर देवी-देवताओं के आशीर्वाद से यहाँ स्वर्ग का विपिन नन्दंकानन का आविर्भाव हो गया है तथा यहाँ एक चेतना की धारा प्रवाहित हो गई है।इस मनमोहक प्राकृतिक छटाओं से भावविभोर कवि का अपनी लेखनी से इस नैसर्गिक दृश्य को शब्दबद्ध करने के लिए व्याकुल हो उठना स्वाभाविक है।

सत्य तो यह है कि इस चराचर सृष्टि से अनुप्राणित कवियों ने अपने 'स्व' को भूलकर कई काव्यों की रचना कर भारतीय साहित्य वांग्मय की श्रीवृद्धि में अपना योगदान दिया है। इन महान रचनाकारों से प्रेरित हमारे जम्मू-केंद्रीय विश्वविद्यालय के नव पल्लवित कवियों ने अपनी क्षमतानुसार विश्वविद्यालय द्वारा निरंतर प्रकाशित भित्ति पत्रिका 'शारदा' को नवकलेवर प्रदान किया है।

विश्वविद्यालय के युवा मन के कवियों को एक मंच प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति तथा 'शारदा' भित्ति पत्रिका के संरक्षक प्रो. संजीव जैन जी की प्रेरणा हमें हमेशा मिलती रही है। इन महान सर्जकों को निरंतर नयी-नयी रचनाएँ सृजित करने हेतु प्रेरणा प्रदान करने में हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग के विभागाध्यक्ष प्रो. भारत भूषण जी का योगदान भी स्तुत्य है।

'शारदा' भित्ति पत्रिका के दसवें (अप्रैल-जून, 2025) अंक के रचनाकारों को एकसूत्र में बाँधकर प्रस्तुत करने में विशेष योगदान देने वाले पत्रिका के संपादकों शोधार्थी अंशु कुमारी और विष्णु को विशेष बधाई। जम्मू केंद्रीय विश्वविद्यालय के इन नवोन्मेष प्रतिभाओं की लेखनी से निकली श्रेष्ठ रचनाएँ पाठकों के अवलोकनार्थ प्रस्तुत हैं। आशा है रचनाएँ पाठकों के लिए स्वीकार्य होंगी...

डॉ. शशिकांत मिश्र (सह-आचार्य)

प्रधान संपादक

कारे बदरा

ओ! कारे बदरा मेरे
तूने इस मन को बार- बार,
अपनी कर्मठता से,
अपने अंदर की ऊर्जा और लगन से
मानव हित के लिए किए
अपने सम्पूर्ण समर्पण से ही
जीत लिया है ।
तूने ही तो दो आँखों मे उगने वाले मोती को
अपने हृदय के अंतरतम में कहीं छिपाकर
किसी अधूरे चेहरे पर, जो देख रहे हैं राहें उन प्यारे मोती के दो बूंदों की
घन बन कर बरसातें की हैं।
तूने ही तो आस लगाए
प्यासी नज़रों से तकती धरती को
और उसके किसान को
अपने जल की धाराओं से स्नेहिल करके
उनको जीवनदान दिया है।
तूँ जिसने सूरज के पूँजी के प्रकाश को
अपने बेहद घने स्वरों में ललकारा है,
और बिचारी धरती पर अपनी प्रकाश से शासन करने वाले
पूँजीपति सूरज के भी घमण्ड को तुमने चकनाचूर किया है।
कई दफे
ताराओं के झुरमुट की रँगीली नृत्य सभा के भीतर
तोंद पसारे उस मदमस्त चाँद को,
जो अपनी रंगरलियों में बेसुध खोया रहता है,
अकर्मण्यता की उस मूरत को
तुमने अपनी छाया के आगे झुकने पर
बेबस और मजबूर किया है।
लेकिन मेरे प्यारे बदरा
तुमको इस ज़ालिम दुनिया ने
कभी नहीं सम्मान दिया है,
केवल हेतु स्वार्थपूर्ति के
तेरा नाम पुकारा इसने
इस मतलब की दुनिया ने उफ़्फ़ ;
सदा तुम्हें कालिख़ के कूँए में डाला है ।
तोंद पसारे उस मदमस्त चाँद को,
जो अपनी रंगरलियों में बेसुध खोया रहता है,
अकर्मण्यता की उस मूरत को
तुमने अपनी छाया के आगे झुकने पर
बेबस और मजबूर किया है।
लेकिन मेरे प्यारे बदरा
तुमको इस ज़ालिम दुनिया ने
कभी नहीं सम्मान दिया है,
केवल हेतु स्वार्थपूर्ति के
तेरा नाम पुकारा इसने
इस मतलब की दुनिया ने उफ़्फ़ ;
सदा तुम्हें कालिख़ के कूँए में डाला है ।

हर्षित तिवारी (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

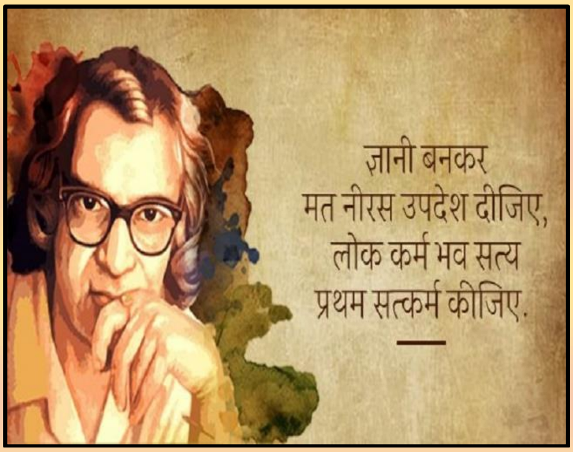

भारतवर्ष

भारतवर्ष देश हमारा
हिंदी हमारा है सम्मान
भारत माता के भालपर
यह सम्मान बिंदी है
हिंदी हिंदी होते होते
परम्परा को निभाते सप्राण
आलोकित होता हृदय है
अपनी पथ की करते पहचान
जान लो और मान लो
मातृ भाषा से जुड़ते सुजान
देश की भाषा, हमारा है अभिमान
तो आओ मिलकर जान लें सत्य
तो आओ मिलकर मान लें सत्य
हिंदी भाषा में बसते प्राण
भेद न करते भाषाओं में
भारतवासी हम महान लेकिन
हिंदी भाषा राष्ट्र की बने पहचान,
राष्ट्र की बने पहचान...!
जय हिंद, जय भारत

डॉ. वंदना शर्मा
(सहायक -आचार्य)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

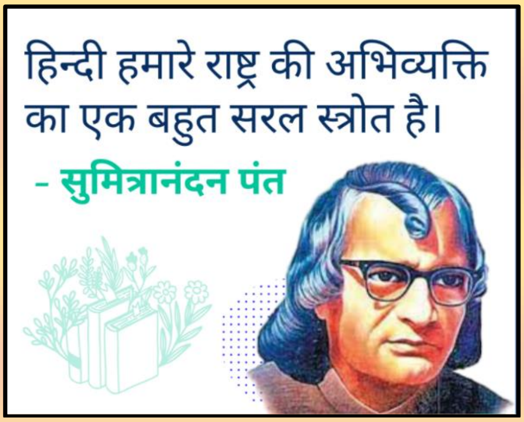

मानव

अपने अहम में उलझा मानव, पथ न कोई दिखता है दुनिया को सुलझाता मानव, जीवन के मकसद को समझे न अधिकारों के जाल में फंसा है..

कर्तव्यों को वह जाने न निज अस्तित्व को छोड़ चुका है, इसको वह पहचाने न कौन कहाँ से आया है?

कहाँ हर किसी जो जाना है? इसका इसको भान नहीं......!!! यश कीर्ति सब पास है उसके,

अफ़सोस है कि बस ईमान नहीं, काल के झूले में झूल रहा है, आज को वह भूल रहा है|

पल-पल घटती आयु लेकिन, छोड़ अपना उसूल रहा है ईश्वर खोल दो इसकी आँखें....|

इसको इसका लक्ष बता दो है अपने में ही उलझा मानव, इसको इसका पथ दिखला दो......

प्रियंका (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

हे माँ! तुझे प्रणाम

माँ! तुझे प्रणाम, तुझको सलाम,
तेरे लिए है जीना मेरा काम।
तेरी माटी में सोना चमके,
तेरे दम से ही जीवन थमके।

तेरे खेतों की हरियाली,
तेरे पर्वत, तेरी नदियाँ प्याली।
तेरे रक्षकों की आँखें जागें,
सीमा पर जो प्राण भी त्यागें।

तेरी धड़कन में जो बसा है,
वो ही सच्चा देशवासी है।
धूप झेले, छाँव न मांगे,
तेरे नाम से जीवन मांगे।

बच्चा-बच्चा बोले अब,
"जय हिन्द" मेरा सपना है बस।
तेरे चरणों में ये जीवन हो,
तेरे वास्ते ही हर जन हो।

माँ! तुझसे है मेरी पहचान,
तेरे बिना सब कुछ वीरान।
भारत माता तुझको वंदन,
तेरी जय हो, तेरा अभिनंदन।

अमन कुमार चौधरी (स्नातकोत्तर छात्र)
तुलनात्मक धर्म एवं सभ्यता केन्द्र

मैं हिन्दू हूँ, मैं मुसलमान हूँ...

मैं मंदिर की घंटी भी हूँ,
मैं मस्जिद की अज़ान हूँ।
मैं चर्च की प्रार्थना भी हूँ,
मैं गुरुद्वारे की शान हूँ।
मैं गीता का ज्ञान भी हूँ,
मैं कुरान की आयत हूँ।
मैं बाइबल के वचन में भी,
मैं गुरुबाणी की जात हूँ।
फिर क्यों मेरे नाम पर,
तलवारें उठाई जाती हैं?
क्यों दंगों की आग में,
माँ एं जलाई जाती हैं?
धर्म अगर राह दिखाता है,
तो यह राह जलती क्यों है?
अगर प्रभु एक हैं सबके,
तो सूरत बदलती क्यों है?
जो हरा पहन ले, ऊँच वो क्यूँ?
जो भगवा ओढ़े, ग़लत वो क्यूँ?
धागे में बँटे इंसान यहाँ,
क्या मिट्टी को बाँट भी दोगे ?
हमने बाँट लिया भगवानों को,
अब इंसान भी बाँट दिए।
सियासत ने जो खेल रचा,
उसमें हम सब फाँस दिए।
अब उठना होगा, बोलना होगा,
शब्दों से आग नहीं, शांति खोलना होगा।
धर्म नहीं, कर्म को पूजें,
नफरत नहीं, प्रेम को सूझें।
क्योंकि मैं न हिन्दू पूरा हूँ,
न मुसलमान आधा हूँ।
मैं बस एक इंसान हूँ —
और यही मेरा धर्म, यही मेरा कर्म है।
क्योंकि मैं न हिन्दू पूरा हूँ,
न मुसलमान आधा हूँ|
मैं बस एक इंसान हूँ-
और यही मेरा धर्म, यही मेरा कर्म है|

अमन कुमार चौधरी (स्नातकोत्तर छात्र)
तुलनात्मक धर्म एवं सभ्यता केन्द्र

प्रभात फेरी

सुबह की लाली, बहुत प्रतिभाशाली
निकलती जब धूप पहाड़ों से
खिल जाए मौसम का रूप नज़ारों से
यह दृश्य, बड़ा अदृश्य
समाए है अपने अंदर अनेक रंग
नदी-नाले, पेड़-पौधे, नवदीप, उमंग
सुबह के पंछी चहक रहे
क्यूँ ये पागल बहक रहे
नए स्वान, नए मेहमान बैठे हैं मेरे लहजे पे
नई धुन, चल सुन क्या कहती मेरे लहजे से
उठूं गाऊं लिखूँ या निहारुं
जग का रूप कैसे सवारुं
आँखें मूंदू, ख्याल ढूंढू
पाऊं कैसे सौंदर्य जहान का
मिलता नहीं कोई रंग मेरी पहचान का

डालेश शर्मा (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

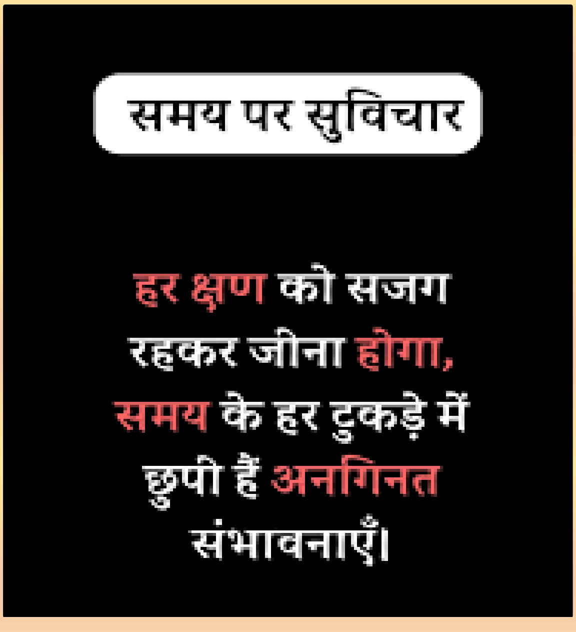

ग़ज़ल

वो रात आती नहीं जिस रात आँखें नम नहीं।
ये ज़िंदगी हमारी किसी सज़ा से कम नहीं।

हुआ असर दर्द का उसके जाने के बाद हमें,
जो कहता था मेरे जाने के बाद होगा ग़म नहीं।

कोई नज़ारा नहीं कोई नूर नहीं आँखों में अब,
है तो बस तिल्ख़ियाँ कोई सुहाना मौसम नहीं।

वही तड़प, वही बेचैनी, वही मंजर आज भी,
क्यूँ ये एहसास हमारा होता अब बेदम नहीं।

भुला देते उसे तो 'डालेश' तुम जीते खुशी-खुशी,
मगर बिना उसके दिल को खुशियाँ हजम नहीं।

डालेश शर्मा (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

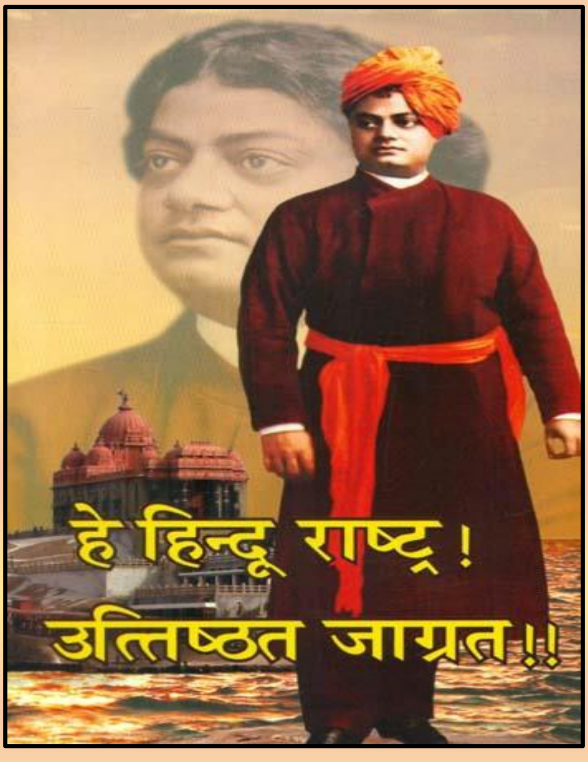

यात्रा का सत्य

रात भर नींद नहीं आई,
सुबह जाना था कहीं दूर।
सामान बाँधा—कपड़े, जूते,
फोन का चार्जर, खाने का थैला—
सब कुछ रखा,
पर मन का बोझ कोई थैले में समाया नहीं।
सोचता रहा—
कैसी होगी गाड़ी,
कैसा होगा रास्ता,
कितना समय लगेगा।
पर असली प्रश्न यह था—
मैं क्यों जा रहा हूँ?
और यह प्रश्न तो
हर जीवन-यात्रा की धड़कन है।
याद आया—
दोस्तों की हँसी,
गली की चाय की भाप,
गप्पों की गूँज।
याद आया—
परिवार की छाँव,
माँ की चिंता,
पिता की उम्मीदें,
भाई-बहन की मुस्कान।
याद आए रिश्तेदार,
जिन्हें हमेशा हमारी
कमज़ोरी और ताक़त पर
अपनी राय देनी होती है।समाज भी याद आया—
"लोग क्या कहेंगे?"
यह सवाल, जो हर क़दम पर
हमारे साथ चलता है,
कभी हमें रोकता है,
कभी हमें आगे धकेलता है।
धन-दौलत, घर-आँगन,
इज़्ज़त-प्रतिष्ठा—
सब जैसे बाँधते भी हैं,
और छोड़ने की चाह भी जगाते हैं।
प्रेम और नफ़रत की भी स्मृतियाँ आईं—
किसी ने अपनाया तो किसी ने ठुकराया,
किसी ने साथ दिया तो किसी ने धोखा,
पर हर अनुभव ने सिखाया—
किसी का भी साथ स्थायी नहीं होता।
दोस्तों को बुलाया,
कुछ आए, कुछ नहीं आए।
जिन पर सबसे ज़्यादा भरोसा था,
वे बहानों में उलझ गए।
जिन्हें कभी हल्के में लिया था,
वे अचानक पास आ गए।
यहीं समझ आया—
साथ और वफ़ा का मूल्य
समय ही तय करता है,
हम नहीं।यात्रा तो अकेले ही तय करनी होगी।
पर यही तो जीवन है—
हम जन्म से मृत्यु तक
एक लंबा सफ़र तय करते हैं।
परिवार, रिश्तेदार, दोस्त,
समाज, पैसा, घर,

प्रेम और नफ़रत—

ये सब यात्री हैं इस यात्रा के,

कभी संग बैठते हैं,

कभी उतर जाते हैं बीच राह।

आख़िरकार रह जाता है यात्री अकेला,

अपनी साँसों और अपने अनुभवों के साथ।

बस आई,

मैंने एक गहरी साँस ली,

और समझा—

जीवन का शाश्वत नियम यही है—

जाना ही पड़ता है,

छोड़ना ही पड़ता है।

मंज़िलें नहीं टिकतीं,

सफ़र ही शाश्वत है।

विक्रम सिंह (शोधार्थी)

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

फूल, गंध और कपड़े

वे समझते हैं कि फूलों से
एक शाख निकल आएगी
उन्होंने देखा कि एक नया
जिस्म निकल आया है

फूल के ऊपर दो रंगों की एक परत है
उसके नीचे हल्के हरे रंग की चमक है
फूल के पीछे कि ओर आकर्षित करता
कांटों का एक पुराना सड़ा हुआ सा पेड़ है
फूल के बाद एक और फूल खिलने लगा है
पहले वाला टिका है और टिके रहने की कोशिश करता है।।

हमको सबने मिलकर छाना है और हम इतने सालों बाद छन कर निकले हैं बारीक और बहुत बारीक संवेदना.....
हमारे अंदर बची है सबने बताया कि हम एक टूटे हुए पत्थर से निर्मित हैं
फूल जिससे एक शाख निकल रही थी
कुछ लोगों ने मिलकर उसको कुचल दिया है हमने अपने कपड़े में उसी फूल की
गंध महसूस की है उन्होंने मिलकर हमको उसी फूल के गंध वाले कपड़े पहनाए हैं।

जब हमने मना किया और
अपने बल से उनको दूर किया
तब उन्होंने हमारे हाथ तोड़ डाले
उंगलियों में से नाखून खींच डाले
खून से सने हाथ पर उन्होंने
फूलों वाले कपड़े हमारे
कंधों पर डाल दिए।

सोचिए ऐसा किसने किया ?
और क्यों एक फूल को

तोड़कर उसकी गंध वाले
कपड़े हमारे कंधों पर डाले
जब फूल को कुचला गया तब उसे
कुचलने वालों ने अपने बचाव के लिए
उन लोगों को निशाना बनाया
जो साधारण थे
हम भी उन्हीं में से थे
सारे इल्जाम दूसरों के कंधों पर
डालकर
वो नए फूलों को कुचलने चले गए।

अब हमको खून के साथ-साथ
फूल के खून की गंध भी सहनी पड़ती है।
एक नया फूल कहीं खिलने के लिए
और शायद कुचलने के लिए
तैयार हो रहा होगा
फिर कुछ कंधे उनके कुचले जाने के
इल्ज़ाम से झुक जायेंगें।।

कमलदीप सिंह (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

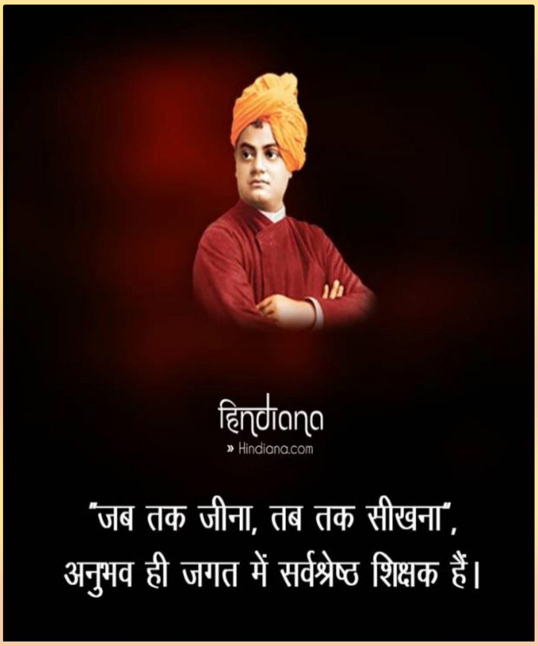

तुम चले जाओगे..

दुनिया चलती रहेगी लेकिन तुम चले जाओगे ज्यादा कुछ नहीं, आप अपने माता पिता को दुख देकर चले जाओगे ।
क्यूँ जाना है किसी को समय से पहले, क्यूँ घबराना है अपनी विजय से पहले ।
अपने दिमाग में चल रही बातों को बताना होता है, कुछ-कुछ बातों को अपने दिल से नहीं लगाना होता है।
परेशान हो परेशान हो, परेशानी तो बताओगे बिना बताए तुम ऐसे कैसे चले जाओगे
अपनी परेशानियों को बताने से तू क्यूँ डरता है, समय से पहले चले जाना सबसे बड़ी कायरता है।
दुनिया में हर समस्या का समाधान होता है, उसके लिए पहले समस्या बताना होता है।

योग करो, ध्यान लगाओ तनाव मुक्त रह पाओगे
माता - पिता को दुख देने से बड़ा कोई पाप नहीं, फिर भी ना समझ पाओ, तो तुम्हारे चले जाने से कोई बात नहीं।

अनुराग कुमार (विद्यार्थी)
शिक्षा अध्यन विभाग

यह एक और समय पीछे...

यह एक और समय पीछे छूट गयारात के 2:02 हो रहे हैं, वो 20 वर्ष पुराना नीम का वृक्ष मेरा मित्र जिसको काट दिया गयाबाबा भी छोड़ गए इस संसार कोपर ये मेरा मन..बार बार कह रहा है कि मृत्यु दो लोगों की हुई है...एक वो मेरे बचपन का साथी नीम का पेड़ जिसको मैं गले से लगा के अपनी भावनाओं को बाँट लिया करती थी..और दूसरे वे जिनके ज्ञान के सागर की बूँद को जीवन के ख़ाली मटके में भर लिया करती थी| वो बच्ची नयनों के अश्रु को घोंट कर कह रही थी कि डायरी लिखने की कला मेरे खून में ही है..बाबा की मृत्यु के उपरान्त मुझे बाबा की पुरानी डायरी मिली जिसमें 1952 के दशक की लिखी हुई बातें, कविताएं, और निर्गुण थे...एक कोने में पिता जी के विवाह के खर्चे भी लिखे थे, एक कोने में बाबा को अपनी माँ से मिलने की गुहार भी थी और साथ ही दादी को घर पर खर्च भेजने के लिए चिट्ठी भी चिपकी हुई थी| बाबा से मैंने गहनतापूर्ण बात करने का ख़ूब प्रयत्न किया और आखिरकार मैंने एक प्रश्न पूछ लिया... कि बाबा 75 वर्षों के बाद आपके भाई-भाई का रिश्ता 5 मिनट में खत्म हो गया ? क्या आपका मन लग जाता है भाई के बिना ? बाबा ने चुप्पी साधे रखीं कुछ देर तक...मेरी दृष्टि उनके चेहरे पर थी...मानो वो रो पड़ेंगे ..फिर जवाब आया कि यही तो जीवन है नातिन "बेटा" कोई भला अपने भाई से खून का रिश्ता कैसे तोड़ सकता है! बाबा अपने आंतरिक पीड़ा और कठिन विरह को छुपाने के लिए फटाक से मुझे डांट कर कह दिए कि छोड़ ऊ अनपढ़ की बात, बड़े भाई होवे के धर्म निभा डेले बनी हम, अब चाहे वो कुछ भी करे....! बच्ची चुप रही और लम्बी सांस लेने के कुछ देर बाद वो अपने कमरे की ओर लौट गई 16 जून 2025 को बाबा जाते जाते कुछ कह ना सके परन्तु उनके चेहरे पर प्रसन्नता थी कि बच्चे शिक्षा ले रहे हैं... शायद कुछ और भी कह सकते थे पर कह न पाए हृदय की कुंठा को भला कोई कैसे कह जाए | शायद बाबा को एहसास हो गया था कि अब जाना है उनको ...बाबा मरना नहीं चाहते थे वास्तव में दुनिया में मरना कोई भी नहीं चाहता बाबा तो कत्तई नहीं उनकी बातें आज भी मेरे कानों में गूंज रहीं हैं | बाबा आज भी ज़िन्दा हैं उस घर के कमरों में, मेरी दादी की बातों में, मेरे इस लेखन में, उस डायरी के पन्नों में ...आख़िरकार बच्ची ने कुंठित भरे जर्द को गले से ऊपर कि ओर जाने दिया और रो पड़ी, कहते -कहते कि समय की वेदना समय ही ठीक कर सकता है|

रोशनी (विद्यार्थी, शैक्षणिक अध्ययन विभाग)

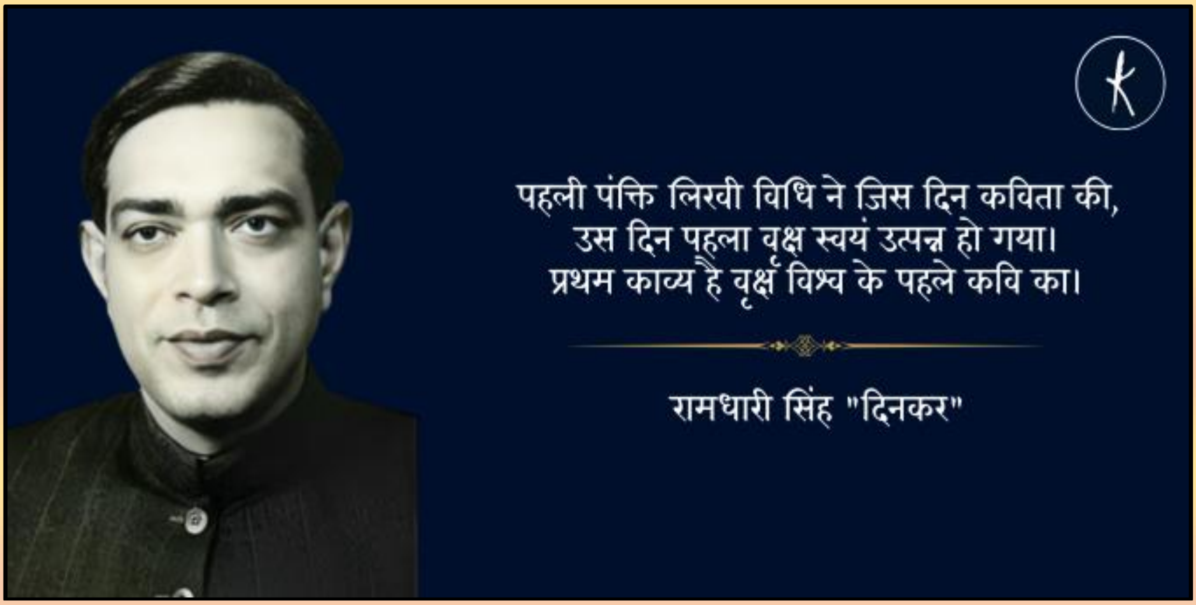

अल्हड़ प्रेम का राग...

बहुत दिन हुए प्रेम का राग गाए हुए। पिछली बार तुम प्रकृति के साथ तन्मय कब हुए थे? शायद बहुत दिन हो गए हैं...? हम सब ने अपनी जिंदगी के आस-पास इतना शोर-शराबा घोल दिया है कि अमन का राग खो-सा गया है... आशा, उम्मीदें, मंजिल, मनुष्यता और एक-दूसरे के लिए जीने की चाहत हमें इन्सान बनाती है। प्रेम इन सब में शांति का रस घोलता है। एक शरबती रंग जो मीठा भी है, और रंगीन भी। और यही मिठास और रंगों की चाहत जीने की इच्छा पैदा करती है, और यही रंग और स्वाद मैं तुम्हारे साथ जुड़कर महसूस करती हूँ। गुत्थियाँ सुलझ जाती हैं, अगर हम उसे साझे रूप से सुलझाना चाहें तो... चाहे यह गुत्थी जीवन की हो या किसी और चीज की। जबसे तुमसे जुड़ी हूँ, कभी अकेला स्वप्न नहीं देखा। मैंने हर स्वप्न में एक साझेपन की खुश्बू को महसूस किया। तुम्हारी ख़ुशी, तुम्हारी हँसी मेरे लिए इतने मायने रखती हैं, जैसे किसी मासूम बच्चे के प्रति एक खास तरह का ममत्व, एक खास तरह का पवित्र मोह... और मैंने तुम्हारी एक-एक मुस्कान के लिए हर एक डाली के पत्तों को छूने की कोशिश की जिससे कि तुम्हारे चेहरे पर इन्द्रधनुषी मुस्कान फिर से लौट आयें...। मैं यह कभी नहीं चाही कि मेरी वजह से तुम्हारी जिंदगी सिमट जाए... बल्कि मैंने तो तुम्हारे लिए खुले आसमान की कल्पना की। जैसे खुला आकाश और पंछियों का चहकना, जैसे तन्मय होकर मोर का नाचना और अपने लिए भी कोई चाँद सितारा नहीं चाहा मैंने, सीप के मुँह को जबरदस्ती खोल कर मोती पा लेने की जल्दबाजी भी कभी नहीं रही। "...बस चाही तो चंद पल, चंद क्षण की साझी मुस्कान, तुम्हारे जीवन के हजार पलों में तन्मयता के दो पल, तुम्हारे जीवन की तमाम बारिशों में साथ की दो बारिशें, बस इतनी-सी ख्वाहिश है मेरी मैं कभी तुम्हें उदास नहीं देखना चाहती। नहीं चाहती कि तुम एक पलटन की भीड़ में जीवन के मोती लूटा दो। मैं तो चाहती हूं कि तुम वह सब कुछ पाओ जो तुम पाना चाहते हो.. बस इतनी सी ख्वाहिश है मेरी तुम बार-बार मुझसे कहते हो कि "दोस्त बनकर रहो..." मेरे लिए क्या यह किसी के लिए भी मुमकिन नहीं है। यह लगभग वैसी बात हुई कि रोगी को बुखार हो और उसे किसी और मर्ज की दवा दी जाए यह प्रेम भी एक फ्रीक्वेंसी ही है, जो किसी और फ्रीक्वेंसी पे संगीत नहीं गा सकता। तमाम कोशिशों पर भी वह मधुर संगीत नहीं फूट सकता, भले ही जीवन की वीणा टूट क्यों ना जाए और अंत में एक उम्मीद की"तुम आओगे तुम आओगे मौसम के बेरुखी मेंजीवन के गीत तुम आओगे रिमझिम फुहारों में साथ नाचने के लिए तुम आओगे खुले आसमान के नीचे जहाँ चाँद की ओट होगी और हम तुम होंगें बस हम तुम एक-दुसरे के प्रति एक-दुसरे के लिए मुझे उम्मीद है तुम आओगे सिर्फ मेरे लिए और तब कोई और ओट नहीं होगी बस होंगी दो आत्माएँ हम-तुम, बस हम-तुम....

सोनल तिवारी (शोधार्थी)

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

हम इतने बड़े कब हो गए

पता नहीं...
वो गली के मोड़ पर खेलते दिन
कब किताबों और फाइलों में कैद हो गए,
कब वो बेवजह की हंसी,
कैलेंडर के पन्नों जैसी फीकी पड़ गई। वो दोस्त,जो रात भर बातें करते-करते
नींद को भुला देते थे,
आज फोन मिलाने से पहले
सोचते हैं......
"क्या परेशान कर दूँगी?"
आज दोस्तों से बात हुई,
हाल-चाल पूछा...
आवाज़ में थकान थी,
शब्दों में चुप्पी थी।
बाहर की दुनिया में तूफ़ान है,
पर उनके भीतर तो बरसों से
उलझनों की आँधी ठहरी है।

जो लोग कल तक बेपरवाह हंसते थे,
जिनके ठहाके गली-मोहल्लों में गूंजते थे,
आज दिन काटते हैं
जैसे ज़िंदगी कोई बोझ हो,
जैसे उम्मीद ने भी हाथ छोड़ दिया हो।
क्यों हम इतने जल्दी बड़े हो गए?
क्यों सपनों की किताब
इतनी जल्दी बंद हो गई?
क्यों इंसान की नफ़रत
इंसानियत से बड़ी हो गई?
क्यों अब गले मिलने से पहले
हम मन की दीवारें नापते हैं?
और क्यों...

वही सबसे चुपचाप रोता है,
और फिर भी सुबह उठकर
दुनिया का बोझ ढोने लगता है
जैसे उसकी ज़िंदगी का
एकमात्र मक़सद... बस जीना हो।
काश...
हम फिर से छोटे हो पाते,
जहाँ एक टूटी पेंसिल भी
दुनिया का सबसे बड़ा ग़म लगती थी,
और एक छोटी सी टॉफ़ी
सबसे बड़ी जीत।

तन्वी बडयाल (विद्यार्थी)
अंग्रेज़ी विभाग

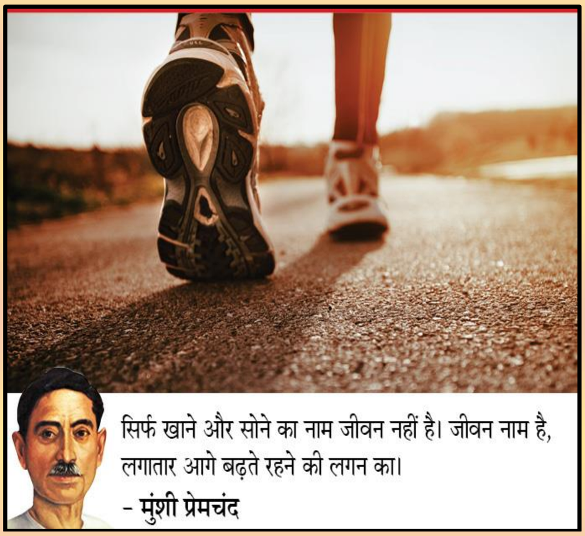

हिंदू एक पहचान...

पहले बताओ हिंदू कौन है
हिंदू कौन है
हिंदू वो है
जिसका रिश्ता है उन पहाड़ों से
आंचल में है चह चाहती चिड़िया है
जिसके घर में पेड़ पर है घोसला उन पंछियों के
जिसका पहाड़ों से है गहरा रिश्ता है
जिसके लिए अग्नि एक माता है
जिसके लिए हर एक बेटी वैष्णो माता के सम्मान है
जिसके लिए वर्षा भी इंद्रदेव है
जिसके लिए सूर्य एक देव है
हिंदू एक इंसान है हिंदू की पहचान है
हिंदू का तुम मतलब जानो
हिंदू से तुम अपने हृदय को जानो
हिंदू है तो धर्म है धर्म है तो सनातन है
हिंदू एक पहचान है
सभी यहां तो हिंदू है
राम लक्ष्मण का वंश चलेगा
शबरी का यहां प्यार रहेगा
रावण जैसे लोग हैं यहां पर
शिव से रिश्ता जोड़ रहे हैं
हिंदुओं से अपने आप को तोल रहे हैं
रामसेतु को देखो जरा तुम
हिंदू एक पहचान है
हिंदू तो एक सोच है यहां पर
क्या हिंदू सिर्फ जय श्री राम है
क्यों करते हो हिंदू बन के पाप यहां तुम
हिंदू एक पहचान है
हिंदू एक सच्चा इंसान है
हिंदू का रिश्ता कन-कन में है यहां पर
जल से लेकर अग्नि तक अग्नि से लेकर
पृथ्वी से लेकर आकाश तक
यह पांच तत्व ही हिंदू है
हिंदू एक पहचान है
हिंदू ही सब की पहचान है
हिंदू की कोई सीमा ही नहीं है
तुम हो हिंदू मैं हूं हिंदू यहां सभी है हिंदू हिंदू
हिंदू केवल एक धर्म नहीं है
यह पांच तत्व ही हिंदू है
हिंदू एक पहचान है
हिंदू ही सब की पहचान है
तुम हो हिंदू मैं हूं हिंदू यहां सभी है हिंदू हिंदू
हिंदू एक धर्म नहीं है
हिंदू की कोई सीमा ही नहीं है
हिंदू एक पहचान है
हिंदू एक पहचान है
न जाने हिंदू क्यों अजान है
हिंदू किस से परेशान है
हिंदू एक शब्द नहीं है
हिंदू तो भारत की शान है
हिंदू से भारत की पहचान है
हिंदू सबकी जान है
क्यों लड़ते हो हिंदू से तुम
हिंदू तो बस एक इंसान है
धर्म की जिसमें जान है
अधर्म का जिसमें विनाश है
कौन है हिंदू कहा है हिंदू
मंदिर जाना से बनता है क्या हिंदू
हिंदू मुस्लिम सिख इसाई आपस म साब भाई भाई से बनता है हिंदू
हिंदू की कोई सीमा नहीं है
हिंदू एक तालाब नहीं है
हिंदू एक समंदर नहीं है
हिंदू एक पहचान है
जिसकी शिव से पहचान है
हिंदू तो सदियों से है जिंदा
सदियों तक यह जिंदा रहेगा
हिंदुओं की तुम बात सुनोगे

हिंदुओं से तुम बात करोगे
आने वाले वक्त में तुम
हिंदुओं से अपनी पहचान करोगे
हिंदू एक पहचान है
हिंदू सब की शान है
हिंदू से पहचान है
भारत की इसमें जान है
हिंदू एक पहचान है
हिंदू एक पहचान है

पंकज कुमार (विद्यार्थी)
शैक्षणिक अध्ययन विभाग

लोग हैं

तू अपनी खूबियां ढूंढ
खामियां निकलने के लिए लोग हैं न
अगर रखना है कदम तो आगे रख
पीछे खींचने के लिए लोग हैं न
सपने देखने हैं तो ऊंचे देख
नीचा दिखने के लिए लोग हैं न
तू अपने अंदर जुनून की चिंगारी भड़का , जलने के लिए लोग हैं न
प्यार करना हैं तो खुद से कर
नफरत करने के लिए लोग हैं न
तू अपनी अलग पहचान बना
भीड़ में चलन के लिए लोग हैं न
तू कुछ करके दिखा इस दुनिया को
तालिया बजाने और तुम्हारे साथ पहचान निकालने के लिए लोग हैं न......!!

साँची शर्मा (विद्यार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

ख्यालात

मैं नए ज़माने की लड़की हूँ
पर ख्यालात जरा पुराने रखती हूँ
हां माना कभी कभी सलवार कमीज़ से जरा दूर भागती हूँ

पर तन पूरा ढकने में विश्वास रखती हूँ जात, धर्म, कुल से बढ़कर कारण को मानती हूँ पर घर वालों के खातिर नाम के साथ गोत्र लगती हूँ

नई रिवायतों के साथ चलती हु पर खुले विचारों के नाम पर बेहया नहीं बनती ।अपने हक में दलीले पेश करती हूँ और कभी कभी लड़ भी जाती कभी भी नई पीढ़ी की तरह घर से भाग जाने मे विश्वास नहीं रखती हूँ अपनी चाहत से जीती हूँ जिंदगी पर चाहते में भी हद रखती हूँ जितने रिश्ते रखती हूँ दिल से रखती हूँ - बस हाथ मिलाने या हाल चाल पूछने के लिए नाते नही रखती कई-कई महबूब रखना नए जमाने की भी रिवायत नही....

पर किसी एक को टूट कर चाहने की रिवायत कायम रखती हूँ हाँ ! मैं नए ज़माने की लड़की हूँ पर ख्यालात जरा पुराने रखती हूं !!!

साँची शर्मा (विद्यार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

क्या करूं...

क्या करूं..?
मैं करूं सृजन का श्रंगार ,
या देखूं समय को बारंबार..
कितना है पथिक ये,
भ्रमित - उद्वेलित,
और दौड़ता है किस उत्साह से,
कोई सरोवर है, झील कोई,
इस मरीचिका में ,
छला जाता है ना जाने कितनी बार. फिर नभ में कुछ बादल मंडराते हैं स्वप्न नया कुछ लाते हैं, पलकों को भीगाते हैं, पर..जो छला गया हो कितनी ही बार
उसकी आत्मा की प्यास का क्या पता है प्रकृति को, क्यूं फिर से उसने नया ये खेल रचा है..?लेकर कुछ और मजबूत इरादे,फिर से पथिक उठ खड़ा होता है,चलने को कुछ और कदम हैं,..वो जानता है, चलना ही नियति है हर रोज संघर्ष नया होता है,निशा है ,और फलक पर जैसे...
चंद्रमा कुछ और बड़ा होता है..! मृगतृष्णा अब और नहीं है,
कविता अब यथार्थ चाहती है..! वो दूर रह कर, अब और निहारना नहीं चाहती, प्रिय का आलिंगन ही उसकी अभिलाषा है, वहां मौन ही उसकी भाषा है, और प्रेम ही उसका सर्वश्रेष्ठ दर्शन है प्रेमिका का सौन्दर्य, उसका रूप बस वही परम-सत्य है...! क्या करूं..?
मैं करूं सृजन का श्रंगार ,
या देखूं समय को बारंबार......!

सुमन कुमार (शोधार्थी)
अंग्रेज़ी विभाग

पेड़ की फ़रियाद

न काटो मुझे
बेघर हो जाओगे....
न काटो मुझे
तुम आंसू खूब बहाओगे
न काटो मुझे
अपने ही सपनों में धंस जाओगे!!!
न काटो मुझे
अपने ही कीचड़ में गिर जाओगे!!
न काटो मुझे
मां,बाप हर रिश्ते से पीछे छूट जाओगे!!!
ऐसे ही काटते रहे अगर मुझे तो एक दिन
तुम आंसु खूब बहाओगे
फ़िर बाज़ार से नए पेड़ मंगवाओगे!!!
जो बने होंगे प्लास्टिक के
जिनमें न तो प्राण होंगे
और ना ही प्राण देने की क्षमता होगी।
सुन लो मेरी ये आखिरी फ़रियाद
नहीं तो बस खुद आखिर ही बन जाओगे!!!

अँशु कुमारी (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

तुम आना

जैसे उमस-गरमी
को शांत करने आती है
पहली स्निग्ध बारिश,
जो मिट्टी में मिलकर
उसे देती है नवीन ऊर्जा,
एक मोहक गंध,
जो थी तो उस मिट्टी की ही
परंतु बारिश से एकाकार हो,
हुई अभिव्यक्त
तुम आना,
जैसे सर्दी के बाद आता है वसंत,
ग्रीष्म के बाद वर्षा,
और वर्षा ऋतु के बाद पतझड़
धीरे-धीरे, पूर्णता से
तुम आना,
जैसे पहाड़ों में बर्फबारी से पहले
एकाएक ही आती है धुंध,
और कर लेती है सभी को समाहित,
परन्तु साथ कोई नहीं, कहीं नहीं
तुम आना,
जैसे नदियां आती हैं अपने प्रिय से
मिलने, वह नहीं मानती हार
रहती है सदैव संघर्षरत
तुम आना,
जैसे प्रार्थना में उतरती शान्ति
संध्या में खिलती ज्योत्सना
विरह में जन्म लेती आशा – निर्विकार,
लो बुझने से पहले
एक बार चमकता है
दीपक पूरी जीवंतता से,
ठीक उसी तरह
तुम भी आना...

शिवम (शोधार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

ये मैं हूं...

सब मेरे हैं, मैं किसी का नहीं..
सब अच्छे हैं, बस मैं नहीं..

मैं घमंडी हूं, दुनियां में कोई घमंडी नहीं..
सारी बुराईयां हैं मुझमें, बस कोई अच्छाई नहीं..

मैं तो पत्थर दिल हूं, मुझमें संवेदना नहीं..
मैनें सदैव अपना हित चाहा, मैनें किसी का भला किया नहीं..

सभी को मुझसे लगाव है, मुझे किसी से मतलब नहीं..

ये मैं ही हूं,
बाकी दुनियां ऐसी नहीं..

ललित कुमार (विद्यार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

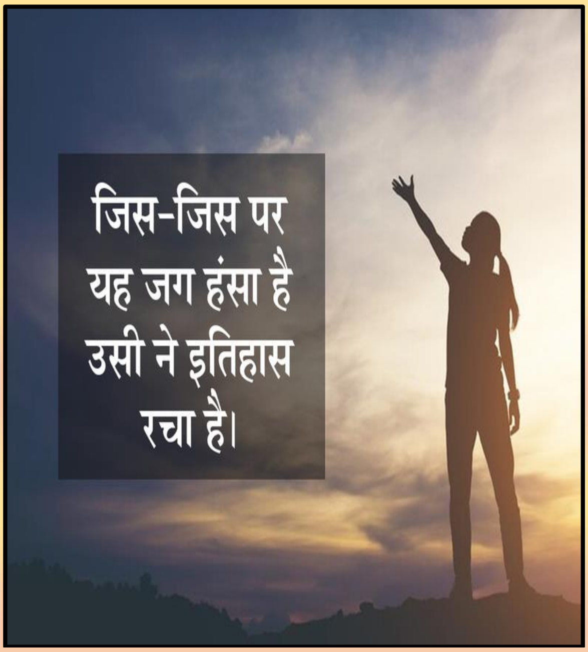

छात्रावास जीवन

छात्रावास के कमरों में शोर है निरंतर सपनों की लकीर खींचता हर कोई यहाँ पररात के साये में छुपी बातें हैं निराली,हर रोज़ की एक अलग कहानी है अपनी पढ़ाई की उजाली राहों में,दोस्तों की मिठास छाई है हर पल छात्रावास के कमरों में शोर है निरंतर सपनों की लकीर खींचता हर कोई यहाँ पर खुद को खो जाने का एहसास है पर साथियों की मिली भगत ख़ास है छात्रावास के कमरों में शोर है निरंतर सपनों की लकीर खींचता हर कोई यहाँ पर हर रोज कुछ नया सीखने को मिलता है हर कोई अपने सपनो को पूरा करने चला है सपनों की डोरी खींचता हर कोई यहाँ पर छात्रावास के कमरों में शोर है निरंतर घर से दूर पर दोस्तों के हैं पास छात्रावास के कमरों में पाये अनुराग माँ की ममता से दूरी का घाव,छात्रावास के कमरों में झलकते कई भाव पढ़ाई का बोझ, सपनों की उड़ान आँखों में नींद, दिल में हैं अरमान छात्रावास के कमरों में शोर है निरंतरसपनों की लकीर खींचता हर कोई यहाँ पर.......!

आदर्श नायक (विद्यार्थी)
(शैक्षणिक अध्ययन विभाग)

भारत देश महान

भारत को झुका पाओग, तुम भारत को हराओगे पानी तो तुम ले न सके, कश्मीर लेकर जाओगे पीठ पीछे वार करके, कब तक खैर मनाओगे भारत के सबर को तुम कब तक आजमाओगे जो उन निर्दोषों की जान की कीमत पूरा देश चुकाएगा कश्मीर चाहिए है न तुम्हे पाकिस्तान भी हाथ सेजाएगा |

भारत के जवान, भारत की नीव

धरती मां के लाडले जाओगे जितना रक्त बहाया है सूद समेत वापिस लाओगे
और उनका अभिमान
भारत की जान है उनके जवान
देश पर आचं आए तो टकराना भी जानते है
देश के लिए मर मिट जाना भी जानते है
बढ़ते है हाथ जब दोस्ती के तो उन्हें थामना भी जानते है
अगर लगाए हाथ कोई देश को तो उसे काटना भी जानते है
शब्दों से इनके हौसलें बताए नही जा सकते और यह देश की वो नीव है जो हिलाए नहीं जा सकते!

ईशा शर्मा (विद्यार्थी)
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग

स्मृति विशेष...

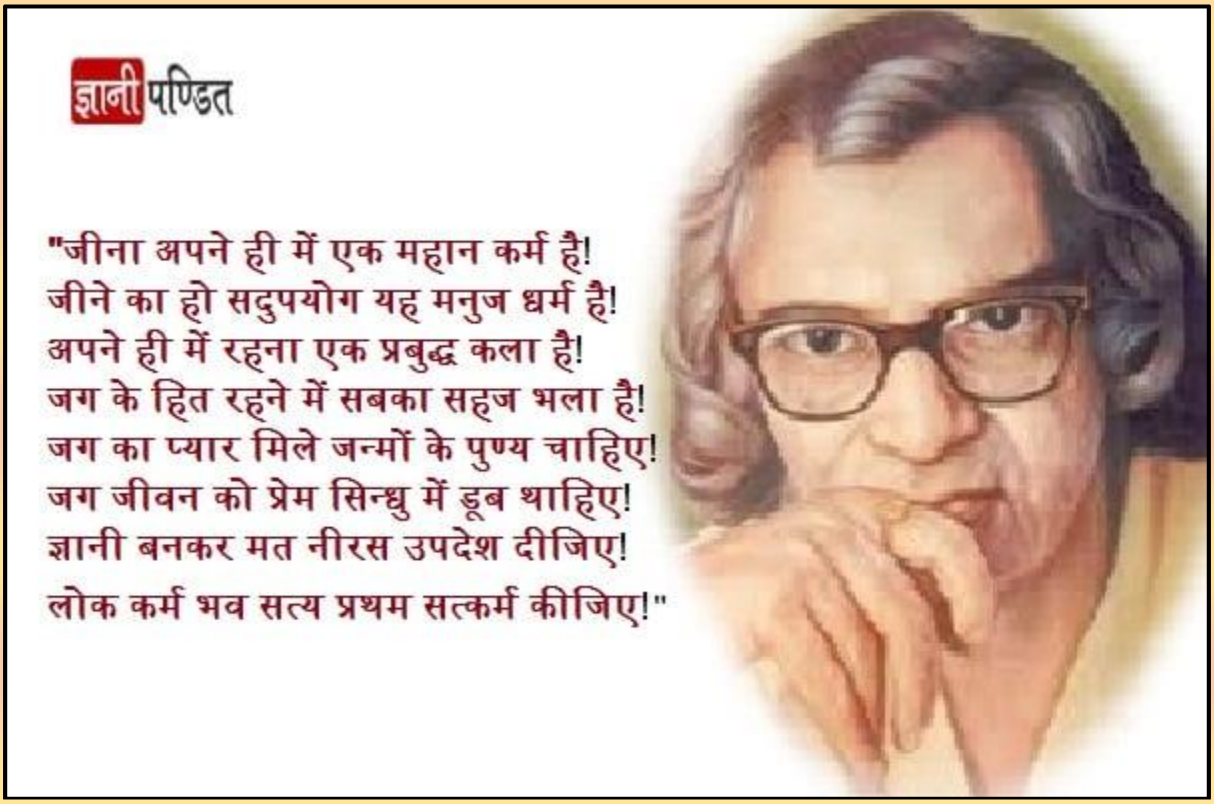

मूल नाम : सुमित्रानंदन पंत

जन्म : 20 मई 1900 कौसानी, उत्तराखंड

निधन : 28 दिसंबर 1977 इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

भारतीय संस्कृति क्या है

आज हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर रहे हैं, जब भिन्न-भिन्न देशों के लोग एक नवीन धरती के जीवन की कल्पना में बँधने जा रहे हैं। जब मनुष्य-जाति अपने पिछले इतिहास की सीमाओं का अतिक्रम कर नवीन मनुष्यता के लिए एक विशाल प्रांगण का निर्माण करने का प्रारंभिक प्रयत्न कर रही है और जब विभिन्न संस्कृतियों के पुजारी परस्पर निकट संपर्क में आकर एक-दूसरे को नए ढंग से पहचानने तथा आपस में घुलमिल जाने के लिए व्याकुल है। ऐसे युग में, जब कि मनुष्य के भीतर विराट् विश्व संस्कृति की भावना हिलोरे ले रही है, "वसुधैव कुटुंबकम्" की घोषणा करने वाली भारतीय संस्कृति के प्रश्न पर विचार विवेचन करना असामयिक तथा अप्रासंगिक नहीं होगा, क्योंकि भारतीय संस्कृति के भीतर वास्तव में विश्व संस्कृति के गहन मूल तथा व्यापक उपादान यथोचित रूप से वर्तमान है।भारतीय संस्कृति के संबंध में आज हमारे नव शिक्षितों के मन में अनेक प्रकार की भ्रांतियाँ फैली हुई है और

विचारशील लोग भी अनेक कारणों से भारतीय संस्कृति का उचित मूल्यांकन करने की ओर विशेष अभिरुचि तथा आग्रह प्रकट करते नहीं दिखाई देते हैं। इसके मुख्य कारण यही हो सकते हैं कि राजनीतिक पराधीनता के कारण हमारी संस्कृति के ढाँचेमें अनेक प्रकार की दुर्बलताएँ, असुंदरताएँ तथा विचार-संबंधी क्षीणताएँ आ गई है और मध्य युगों से हम प्राय: लौकिक जीवन के प्रति विरक्त, परलोक के प्रति अनुरक्त, अंधविश्वासों के उपासक तथा रूढ़ि-रीतियों के दास बन गए हैं। मध्य युग भारतीय संस्कृति के ह्रास का युग रहा है, जिसके प्रमुख लक्षण हमारी आत्म-पराजय, सामाजिक असंगठन तथा हमारे मानसिक विकास का अवरोध रहें हैं। इसके अतिरिक्त हमारे विचारकों तथा विवेचकों का मस्तिष्क पाश्चात्य विचारधारा से इतना अधिक प्रभावित तथा आक्रांत रहा है कि उन्होंने भारतीय संस्कृति के प्रति पश्चिम के समीक्षकों के छिछले तथा भ्रांतिपूर्ण दृष्टिकोण को अक्षरशः सत्य मान लिया है, जिससे अपनी संस्कृति के प्रति उनकी भावना आहत तथा विवेक कुंठित हो गया है। फलतः आज हमारा नव शिक्षित समुदाय भारतीय संस्कृति को उपेक्षा की दृष्टि से देखने लगा है और पश्चिमी विचारों तथा रहन-सहन का थोथा अनुकरण कर अति आधुनिकता के हँसमुख अंधकार से भरे हुए गहरे गर्त की ओर अग्रसर हो रहा है।ऐसा क्यों हो गया है, पश्चिमी विचारधारा की क्या विशेषताएँ हैं और उसके आकर्षण के क्या कारण हैं, पहले हम इस पर विचार करेंगे।पश्चिमी विचारधारा की मुख्य दो विशेषताएँ हैं, जिनके कारण वह युग-युग से पराधीन तथा जीवन-विमुख भारतीय शिक्षित समुदाय को अपनी ओर आकर्षित कर सकी है। उसकी पहली विशेषता है उनका जीवन संबंधी दृष्टिकोण। पश्चिमी विचारधारा जीवन के प्रति अपने मोह को कभी नहीं भुला सकी है। उसने जीवन की कल्पना को मानव-हृदय के समस्त रस से सींचकर तथा रंगीन भावनाओं में लपेटकर उसे मन की आँखों के लिए सदैव मोहक बनाकर रखा है। जीवन के क्षेत्र का त्यागकर या उससे ऊपर उठकर मन की अंतरंतम गुहा में प्रवेश करना अथवा आत्मा के सूक्ष्म रुपहले आकाश में उड़ना उसने कभी अंगीकार नहीं किया है। और भारतीय विचारधारा के प्रति उसके विरोध का एक यह भी मुख्य कारण रहा है कि उसने मात्र जीवन के सतरंगी कुहासे को उतना अधिक महत्त्व नहीं दिया है, बल्कि उसे माया कहकर एक प्रकार से उसकी ओर निरुत्साह ही प्रकट किया है।दूसरी विशेषता पश्चिमी विचारधारा की यह रही है कि उसने तर्क-बुद्धि के मूल्यांकन की आँखों से कभी ओझल नहीं होने दिया है। उसने तर्क-बुद्धि की सफलता को उसकी सामाजिक तथा लौकिक उपयोगिता में माना है और उसका प्रयोग ऐहिक, व्यक्तिगत तथा सामूहिक सुख की अभिवृद्धि के लिए किया है। पश्चिमी संस्कृति तर्क-बुद्धि से इतनी अधिक प्रभावित रही है कि उसने धीरे-धीरे धर्म को भी उसके सूक्ष्म रहस्यमय तत्त्वों से विमुक्त कर उसे अधिकाधिक लौकिक तथा उपयोगी बनाने की चेष्टा की है और धार्मिक प्रतीकों अथवा प्रतीकात्मक रूढ़ि-रीतियों को केवल अंधविश्वास कहकर, धर्म को कुछ लौकिक तथा जीवनोपयोगी नैतिक नियमों के संयोजन में सीमित कर दिया है। कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को छोड़कर जन-साधारण के लिए पश्चिम में धर्मानुराग का अर्थ

केवल व्यक्ति तथा समाज के लिए कल्याणकारी नैतिकता ही से रहा है। और भारतीय संस्कृति के प्रति पश्चिम के विचारकों का एक यह भी आक्षेप रहा है कि उसमें नैतिकता, सदाचार अथवा पाप-पुण्य की भावना पर उतना ज़ोर नहीं दिया जाता है। इसका कारण यह है कि पश्चिमी विचारकों ने भारतीय संस्कृति पर केवल ऊपर ही ऊपर सोच-विचार किया है। और इसमें संदेह नहीं कि भारतीय संस्कृति सदैव से उच्च से उच्चतम नैतिकता, सदाचार, आदर्शों तथा उदात्त व्यक्तित्वों की पोषक रही है। किंतु वह नैतिकता तक ही कभी भी सीमित नहीं रही है, उसमें मन के आध्यात्मिक आरोहण के लिए नैतिकता एक आवश्यक उच्च सोपान मात्र रही है। पश्चिमी संस्कृति आध्यात्मिकता को आध्यात्मिकता के लिए कभी पूर्ण रूप से ग्रहण नहीं कर सकी। जीवन के क्षेत्र में दृढ़ चरण रखे हुए वह आध्यात्मिक स्फुरणों के सौंदर्य, माधुर्य तथा आनंद को केवल प्रशंसक मात्र रही है और आध्यात्मिक ऐश्वर्य का उपयोग उसने जीवन का भार वहन करने भर को किया है।भारतीय संस्कृति का मूल अन्य आध्यात्मिकता रहा है और आध्यात्मिकता भी केवल आध्यात्मिकता के लिए, न धन न जन न च कामिनी के लिए, जोकि ऐहिक जीवन के अत्यंत आवश्यक उपादान है। किंतु इस प्रकार की आध्यात्मिकता का हम क्या अभिप्राय समझे? इससे हमें यही समझना चाहिए कि भारतीय संस्कृति न मनुष्य के अस्तित्व का पूर्ण रूप से अध्ययन किया है। उसने उसके मर्त्य तथा जीव-रूप को ही सम्मुख रखकर उसके लिए जीवन-धर्म की व्यवस्था नहीं बनाई है, बल्कि उसने उसके शाश्वत अमर्त्य रूप की अभिव्यक्ति तथा विकास के लिए भी पथ-निर्देश किया है। जो लोग भारतीय दृष्टिकोण के संबंध में केवल बाहरी ज्ञान रखते हैं, उन्हें उसमें केवल अनेक संप्रदाय, मत, रूढ़ि रीति, तप और साधना के नियम, योग, दर्शन आदि ऐसी अंधविश्वासपूर्ण पुराणपंथी वस्तुएँ मिलती है कि वे उनकी ऐहिक तथा लौकिक जीवन-संबंधी उपयोगिता को यकायक समझ नहीं पाते हैं। हम प्राय: एक जन्म में एक पीढ़ी के, अथवा अधिक से अधिक तीन पीढ़ियों के जीवन को देख पाते हैं और वह जीवन-वृत्त जिन मान्यताओं, दृष्टिकोणों, अभिरुचियों तथा परिस्थितियों को लेकर चलता है उन्हीं को सत्य मान लेते हैं। भारतीय दृष्टिकोण के अनुसार जीवन तत्त्व सदैव विकासशील रहा है और व्यक्ति के जीवन की स्थिति केवल बाह्य जीवन ही में नहीं, उससे भी ऊपर अथवा परे, शाश्वत परात्पर सत्य में मानी गई है। इस शाश्वत जीवन के लिए भारतीय संस्कृति ने अंतर्मुखी पथ निर्धारित किया है। मनुष्य का पूर्ण विकास एक सुख-संपन्न पूर्ण सामाजिकता ही में नहीं, बल्कि मुक्त शांत आनंदमय अमरत्व की स्थिति प्राप्त करने में माना गया है और ऐसे व्यक्तियों ने, जो इस स्थिति को प्राप्त कर सके हैं, मानव-समाज के समतल सत्य में भी बराबर नवीन मौलिक तथा उच्च गुणों का समावेश किया है। भारतीय संस्कृति जहाँ व्यक्तिवादी है वहाँ उसके लोकोत्तर व्यक्तित्व की रूप-रेखाएँ ईश्वरत्व में मिल जाती है। किंतु यह कहना मिथ्या आरोप होगा कि भारतीय संस्कृति केवल व्यक्तिवादी ही रही है। उसने सामाजिक तथा लौकिक जीवन के महत्त्व को भी उसी प्रकार समझने की चेष्टा की है। और भिन्न-भिन्न युगों की परिस्थितियों के आधार

पर उसने अत्यंत उर्वर तथा उन्नत सामाजिक जीवन के आदर्श सामने रखे हैं और उन्हीं के अनुरूप लोक-जीवन का निर्माण करने में भी वह अत्यंत सफल रही है। धर्म-अर्थ-काम सभी दिशाओं में उसका विकास तथा विस्तार अन्य संस्कृतियों की तुलना में अतुलनीय रहा है। उसके वर्णाश्रम को मौलिक व्यवस्था भी जीवन की सभी स्थितियों को सामने रखकर बनाई गई थी, अब भले ही अपने ह्रास-युग में उसका स्वरूप विकृत हो गया हो।किंतु फिर भी यह मानना ही पड़ेगा कि बाह्य जीवन की खोज तथा विजय में पश्चिमी प्रतिभा की विश्व सभ्यता को सबसे बड़ी देन रही है। भारतीय संस्कृति का लक्ष्य मुख्यतः अंतर्जगत् की खोज तथा उपलब्धि रही है और निःसंदेह भारतवर्ष अंतर्जगत् का सर्वश्रेष्ठ तथा सिद्ध वैज्ञानिक रहा है।आज हम एक ऐसे युग में प्रवेश कर रहे हैं, जबकि पूर्व और पश्चिम एक-दूसरे की ओर बाँहें बढ़ाकर एक नवीन मानवता के वृत्त में बँधने जा रहे हैं। आज की जीवन-चेतना को पूर्व और पश्चिम में, ज्ञान और विज्ञान में, या आध्यात्मिकता और भौतिकता में बाँटकर कुंठित करना भविष्य की ओर आँखें बंदकर चलने के समान है। और इसी प्रकार भारतीय संस्कृति या पश्चिमी संस्कृति की दृष्टि से आज की मानवता के मुख को पहचानना, उसके लिए अन्याय करना है।मनुष्य का भूत और वर्तमान ही उसे समझने के लिए पर्याप्त नहीं है। भावी आदर्श पर बिंबित उसका चेहरा इन सबसे अधिक यथार्थ और इसीलिए अधिक सुंदर तथा उत्साहजनक है।यदि पिछले युगों और आज भी, पश्चिम की सभ्यता तथा संस्कृति अधिक जीवन-सक्रिय, क्षुब्ध तथा संघर्षप्रिय रही है और भारतवर्ष की संस्कृति अधिक अंतश्चेतन, प्रशांत, अहिंसात्मक तथा बाहर से अल्प क्रियाशील अथवा जीवन-अक्षम; अगर पश्चिम की संस्कृति बहिर्जड़ प्रकृति पर और पूर्व की अंत प्रकृति पर विजयी हुई है; अगर पश्चिम की संस्कृति ने बाह्य का, वस्तु का, विविध का या वैचित्र्य का और भारतीय संस्कृति ने अंतस् का, एक का, कैवल्य का या परम का अधिक अध्ययन, मनन तथा चिंतन किया है; तो आने वाली विश्व सभ्यता और मानव-संस्कृति अपने निर्माण में इन दोनों का उपयोग कर अधिक सुंदर स्वस्थ संपन्न बनकर तथा भावी मानवता की एकता में नवीन विविधता और उसके पिछले संस्कारों की विविधता में नवीन एकता के दर्शन कर, एक ऐसी व्यापक संस्कृति के वृत्त में प्रवेश कर सकेगी जो भारतीय भी होगा और पश्चिमी भी, और इन दोनों को आत्मसात् और अतिक्रमकर इनसे कहीं अधिक महत्, मोहक, मानवीय तथा अपनी पूर्णकाम लौकिकता में अलौकिक भी।

स्रोत पुस्तक: शिल्प और दर्शन द्वितीय खंड (पृष्ठ 193)